बद्री नारायण की कविताएं

बेगमपुरा एक्सप्रेस

अमरपुर से बेगमपुरा तक
चलती है एक ट्रेन
बेगमपुरा एक्सप्रेस
सुबह पांच दस पर
बिल्कुल ब्रह्मबेला में।

टिकट काउंटर पर बैठा है क्लर्क टिकट लेकर

कहते हैं कि पैसे से मिल जाता है सब कुछ
पर लोग हाथ में ले खड़े हैं पैसे, रुपये व एटीएम कार्ड
टिकट बाबू फिर भी उन्हें टिकट नहीं देता

कत्ली, खूनी, बलात्कारी
बेईमान, चालू, फ्रॉड, लम्पट
हिंसक, झूठ, बवाली,
सुल्तान, साहेब, मालिक

इन सबको नहीं मिलेगा टिकट
दम्भी कवि, सत्ता के बौद्धिक
सब खड़े रह जायेंगे और नहीं मिलेगा
उन्हें इस ट्रेन का टिकट

टिकट बाबू अगर इन्हें बेचना भी चाहेगा
तो उसके हाथ बेकार हो जायेंगे

जो ढाई आखर जानता होगा
वही बेचेगा टिकट
जो ढाई आखर जानता होगा
वही पायेगा टिकट

लहरों से होकर आये तारों को
कोमल मन सुकुमारों को
सराय के मालिकों को तो नहीं
पर सराय में रुकनेवालों को
मिल जायेगा टिकट

टिकट बाबू सोना ले लो, चांदी ले लो
मुहरें और मोती ले लो
पर दे दो मुझे टिकट
कई दशकों से मैंने कोई यात्रा नहीं की है
मैं जाना चाहता हूं
बेगमपुरा

ट्रेन खुलने लगी है, हरे पंछी पेड़ से उड़ने लगे हैं
ट्रेन में घाना बैठे है
पीपा बैठे हैं
बैठे हैं सेना नाई
ट्रेन खुलने लगी है।

तुमड़ी का शब्द

यह सबद की तुमड़ी है
कि तुमड़ी का शब्द
कहना कठिन है

यह शब्द कितना शाश्वत है
कितना क्षणभंगुर
कहना कठिन है

यह कितना नानक का है
कितना कबीर का
कि कितना बोधा, रैदास का
हिगराना कठिन है
बिलगाना कठिन है
कि यह कितना है जौनपुर से आये खिलाड़ी राम का

इस शब्द में क्या है
बूझना कठिन है

इसमें कितनी चाहते हैं, कितनी हसरतें
कितनी इच्छाएं, आकांक्षाएं, स्वप्न घुले मिले हैं,
इसमें कितना भूत है कितना भविष्य
कहना कठिन है

कहना नहीं है आसान कि
इसमें कितना शामिल है इसे कहने,
गाने, सुनने वालों का वर्तमान
इसमें कितना निछुका शब्द है
कितना टेक, कितना कहनी, रहनी और कितना छंद है
कितना आऽऽ, साऽऽ, रेऽऽ का योगदान है इसमें

जिस तुमड़ी से निकला है शब्द
वह कितना जोगी का है
कितना जती का
कितना राजा का
कि कितना है जन का और कितना जनतंत्र का
कहना कठिन है

पर सुनो! इस शब्द से निर्बल को बल मिलता है
निर्धन को धन
अंधे को आंख मिलती है
और बहरे को कान

tadbhav.com home page
● **ctrl +** (Zoom) ● **ctrl -** (ZOOM OUT) ● **ctrl 0** (FIT TO PAGE)

इसमें निराकार को
निराकार में भी साकार मिलता है

इससे अपमानितों को सम्मान मिलता है
मिलती है इसमें निचलों को उठान
इन्हीं शब्दों से गरीबों में जनमता है
ताज और तख्त हिलाने का स्वप्न
देखो कितने तोप, तीर, तलवार,
आरी, कटार, तने हैं इस शब्द पर
कई फूलों के बाण से
इसे मारकर खा जाने
में सिद्धहस्त
लगाये बैठे हैं घात
डरता हूं मैं
इस शब्द के लिए डरता हूं
बीच-बीच में ढांढ़स बंधाता है मुझे
तुमड़ी पर गा गाकर नाचता भगैत
डरो मत कवि!
यह शब्द मरते ही जी जाता है।

अमरपुर गांव में

अमरपुर गांव में इसी इमली के पेड़ के नीचे
नानक, कबीर, रविदास, आम्बेडकर
कभी कभी मिलते हैं
और आपस में दुखों सुखों पर करते हैं विचार
आज सुबह से ही वे चिंतित हैं
चिंता जैसे मंदराचल पहाड़
सूर्य ढलने को आया
पर जा ही नहीं रही हैं
उनके माथे से चिंता की लकीरें

वे चिंतित हैं कि
उन्होंने जो बनायी थी लोकतंत्र की चाभी
वह काम क्यों नहीं कर रही है
अंधेरा इतना बढ़ता जा रहा है कि
जो दीपक जलाये थे

● **ctrl +** (Zoom) ● **ctrl -** (ZOOM OUT) ● **ctrl 0** (FIT TO PAGE)

वो हारते जा रहे हैं
जैसे जैसे गहरा रहा है लोकतंत्र
असमानता की नयी नयी कोटियां
बनती जा रही हैं

आत्मा देह के प्रति
और देह आत्मा के प्रति
क्रूर होती जा रही है।

सोच यही सब लोगो
कबीर अपने बीजक पर
और आम्बेडकर अपने संविधान पर
कर रहे हैं पुनर्विचार
और साथ साथ
अपनी आत्मालोचना भी कर रहे हैं।